युगधार

युगाधार

सोहनलाल द्विवेदी

वक्तव्य

आज हम जिस अहिंसात्मक जन-क्रान्ति की नभ-चुंबी अग्नि-शिखाओं के भीतर से पार हो रहे हैं, वह भारतवर्ष के तपोत्याग एवं तेज का अपूर्व युग है।

आज के कवि का सबसे बड़ा सुवर्ण अवसर यह है कि वह अपने युग की इस सर्वतो महान् जन-क्रान्ति को काव्य का रूप प्रदान कर सके, जिससे आगे आनेवाली पीढ़ियाँ जब इस युग के राष्ट्रीय अभ्युत्थान को देखना चाहें, तब उनकी आँखें अंधकार में ही टकराकर न रह जायें।

हिंदी वाङ्मय राष्ट्र-भारती में एक-से-एक श्रेष्ठ प्रतिभायें हैं। मुझे आश्चर्य से अधिक दुःख होता है कि उनका हृदय आज के तपोत्याग से क्यों नहीं गर्वोच्छ्वसित होता? जननी जन्मभूमि की शृंखला की कड़ियों से उनके प्राणों में दुर्वह व्यथा का महाज्वार क्यों नहीं उद्वेलित होता, और निर्ममता से मानवता का कंठ घोटनेवाले साम्राज्य-वाद के प्रति उनका सक्रिय क्रोध क्यों नहीं धधक उठता?

अर्ध शताब्दी से अधिक अर्धमृत-राष्ट्र की धमनियों में नवीन प्राणों का स्पंदन भरनेवाला बापू का अहिंसात्मक अभियान एवं शताब्दियों से पिसते आते परतंत्र राष्ट्र के करवट बदलने का सुन्दर स्वरूप क्या किसी महाकाव्य महान् साहित्य के लिए सामग्री नहीं उपस्थित करता?

यदि हम अपनी आँखों से देख सुन समझकर भी, अपने इस बल एवं बलि के अपूर्व जीवन को अभिव्यक्ति नहीं प्रदान करते, तो हमसे अधिक हतभाग्य और कौन होगा ?

भैरवी में मैंने राष्ट्र के इसी जीवन, जागरण एवं बलिदान के जीवित चित्रों को काव्य का रूप देने का प्रयास किया है । समाज को मैंने आग्रहपूर्वक राष्ट्र का क्रान्ति-गायन सुनाया है । युगाधार में युग की राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सामाजिक जन-क्रान्तियों की चिनगारियाँ कैसे कहूँ ?—धूम्र-रेखायें हैं ।

मैं जानता हूँ जितना महान् विषय मेरे सामने है, उसकी तुलना में मेरी योग्यता नगण्य है । किन्तु, फिर भी, मैं इस आशा में जो कुछ बनता है, लिखे जा रहा हूँ, कि कभी इस राख की चिनगारी से वह आग्नेय-काव्य प्रकट होगा जिससे इस युग का ज्वलंत इतिहास स्वर्णाक्षरों में प्रदीप्त हो उठेगा ।

आज हमारे सामने सबसे जटिल समस्या यदि कोई है, तो वह एक ही है—दासता से भारत की मुक्ति । हमारी सभी व्यथाओं का एक ही उपचार है—स्वतंत्रता । जो इस मूल को परित्याग कर राष्ट्र के पल्लवों, शाखाओं को सींचते हैं उनके संबंध में कुछ न कहना ही उचित है ।

जिन्हें अहिंसात्मक राष्ट्रीय जन-क्रान्ति में ही राष्ट्र के कल्याण का दर्शन होता है, वे इन साधारण रचनाओं को असाधारण अनुराग से पढ़ेंगे, इसमें संदेह ही क्या है ?

रामनवमी
२००१ विक्रमाब्द
बिंदकी, यू० पी०

सोहनलाल द्विवेदी

क्रम

उत्सर्ग

उनकी पुण्य स्मृति में
जो जननी जन्मभूमि की शृंखलाओं को
कड़ियों को छिन्न करने के
प्रयत्न में सदैव के
लिए बलिवेदी
पर सो गए हैं,
और उन्हें
जो राष्ट्र की स्वतंत्रता के क्रांति-पथ पर
निरंतर अग्रसर
हो रहे हैं।

जब बंदी है राष्ट्र, वंदिनी
अपनी भारत-माता,
क्षुधित तृषित अ-वसन
जनगण है, बैठा दूर विधाता;

पृथ्वीराज कसे घबड़ाते
व्याकुल ज़ंजीरों में,
शब्द-वेध बनकर तुम आओ
सधे हुए तीरों में।
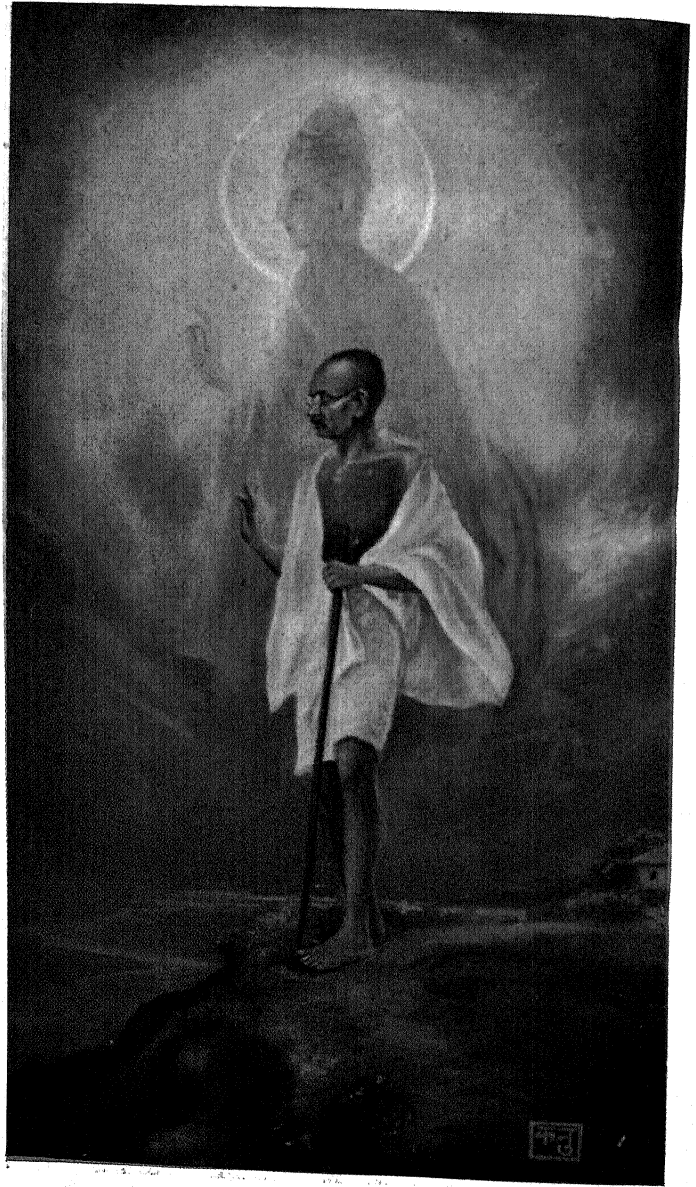
युगाधार

बापू के प्रति

तुम नवजीवन के नव विधान !
युग युग बंधन के मुक्ति-गान !

तुम आशा के स्वर्णिम प्रकाश ,
मानव-मन के मधुमय विकाश ।

तुम नवयुग के नूतन विहान !
तुम नवचेतन के नव विधान ।

तुम हो अतीत के अमर-गीत ,
भावी की मधु-छाया पुनीत ,

तुम वर्तमान के कर्मगान !
तुम नवजीवन के नव विधान !

दुर्बल दलितों के क्रान्ति-घोष ,
तुम पददलितों के शक्तिकोश ।

मृत-जीवन के तुम जन्मप्राण !
तुम नव संस्कृति के नव विधान !

तुम करुणा के पावन प्रवाह ,
तुम अमर सत्य के गंधवाह ,

समता ममता के नववितान
तुम नव संस्कृति के नव विधान !

आत्माहुति के अनुपम प्रयोग ,
नूतन दधीचि के नवल योग ,

बलिदान-गीत, बलिदान-गान !
तुम नव संस्कृति के नव विधान !

रेखाचित्र

उन्नत ललाट पर चिंता की
कतिपय रेखायें लिए हुए,
विस्तृत भौंहें, विशाल नेत्रों में
ममता का मधु पिए हुए,

नासा सुदीर्घ, श्रुतिपुट सुदीर्घ,
सौभाग्य बुद्धि संकेत बने,
नित नमित देखते धरणी को
करुणामय विनय-निकेत बने।

आजानुबाहु फैली दोनो
वक्षस्थल सघन रोम वेष्ठित,
कटि-तट पर खादी की कछनी
अपनी कंगाली की प्रतिनिधि,

शिर पर छोटी सी चोटी के
अनियंत्रित केश छहरते से,
दृढ़ अंग और प्रत्यंग खुले
मलयज के संग लहरते से।

अनमोल सृष्टि की रचना यह
दो अक्षर में हो गई बद्ध,
'बापू' के लघु संबोधन में
सारा रहस्य युग का निबद्ध!

बापू

मन में नूतन बल सँवारता
जीवन के संशय भय हरता,
वृद्ध वीर बापू वह आया
कोटि कोटि चरणों को धरता;

धरणी-मग होता है डगमग
जब चलता यह धीर तपस्वी,
गगन मगन होकर गाता है
गाता जो भी राग मनस्वी;

पग पर पग, धर-धर चलते हैं
कोटि कोटि योधा सेनानी,
विनत माथ, उन्नत मस्तक ले,
कर निःशस्त्र, आत्म-अभिमानी!

युग-युग का घनतम फटता है
नव प्रकाश प्राणों में भरता ,
वृद्ध वीर बापू वह आया
कोटि कोटि चरणों को धरता !

निद्रित भारत, जगा आज है
यह किसका पावन प्रभाव है ?
किसके करुणांचल के नीचे
निर्भयता का बढ़ा भाव है ?

नवचेतन की श्वास ले रहे
हम भी आज जी उठे जग में ,
उठा लगाया हृदय-कंठ से
किसने पददलितों को मग में ?

व्यथित राष्ट्र पर आँचल करता
जीवन के नव-रस-कन ढरता ,
वृद्ध वीर बापू वह आया
कोटि कोटि चरणों को धरता !

यह किसका उज्ज्वल प्रकाश है
नवजीवन जन जन में छाया ,
सत्य जगा, करुणा उठ बैठी
सिमटी मायावी की माया ,

'वैभव' से 'विराग' उठ बोला—
'चलो बढ़ो पावन चरणों में,
मानव-जीवन सफल बना लो
चढ़ पूजा के उपकरणों में।'

जननी की कड़ियाँ तड़काता
स्वतंत्रता के नव स्वर भरता,
वृद्ध वीर बापू वह आया
कोटि कोटि चरणों को धरता!

गाँधी

किसने स्वदेश को युग-युग की
गहरी निद्रा से जगा दिया ?
किसने भारत को पल-पल की
अलसित तंद्रा से जगा दिया ?

चल पड़ा कौन मरने मिटने ?
लेकर कुछ वीरों की टोली,
सुलगा दी मग-मग पग-पग में
किसने आज़ादी, की होली ?

नीली सागर की लहरों को
यह कौन अकेले चीर चला ?
लड़ने को सुभट लड़ैतों से
यह कौन अकेले वीर चला ?

हैं मुट्ठी भर हड्डियाँ, भले ही
कह लो तुम इसको शरीर,
संसार कँपाता चलता है
यह भारत का नंगा फ़क़ीर!

हमने, तुमने, सबने जिस पर
अपने सुख की आशा बाँधी,
अपनी यशुदा का मनमोहन
वह भारत का प्यारा गाँधी।

सेवाग्राम की आत्मकथा

वर्धा में बापू का निवास
अब कहते जिसको महिलाश्रम,
क्या देख रहे ये उन्मन हो
नभ में घन के घिरने का क्रम ?

घन विकल घूमते अंबर में
कैसे बरसावें वे जीवन ?
बापू हैं आश्रम में आकुल
कैसे लावें वे नवजीवन ?

बिजली है रह रह कौंध रही
घनमाला के अंतस्तल में,
संकल्प विकल्प इधर उठते
हैं बापू के हृदयस्थल में—

'वे नगर विभव वैभव बंधन से
चाह रहे हैं कसना मन,
मैं चला तोड़ने ये कड़ियाँ,
आ रहा ग्राम का आमंत्रण।'

आ रही ग्राम की सरलवायु
कहती आओ हे मनमोहन!
तुम बहुत रह चुके नगरों में
देखो मेरे भी गृह-आँगन!'

आओ तुम पुरई-पालों में
आओ छप्पर खपरैलों में,
आओ फूसों की कुटियों में
कुम्हड़े कद्दू की बेलों में।

आओ कच्ची दीवारों से
निर्मित घर की चौपालों में,
रहते हैं दीन किसान जहाँ
जामुन महुआ के थालों में।

आओ नवजीवन के प्रभात!
आओ नवजीवन की किरणों,
इन ग्रामों का भी भाग्य जगे
ये भी पदनख को वरणों।

ये ग्राम उगाते अन्न धान
वे नगर प्रेम से चलते हैं,
जो कृषक उगाते साग पात
वे नगर लूटते रहते हैं।

दधि दूध और घृत की नदियाँ
ये नगर पिये ही जाते हैं!
भूखे रहकर, नंगे रह कर
ये ग्राम जिये ही जाते हैं!

कुछ मूल, सूद दर सूद लगा
गृह छीन लिए ही जाते हैं,
चिकनी चुपड़ी बातें कहकर
रे घाव सिये ही जाते हैं!

निशिदिन है हाहाकार मचा
कैसा यह अत्याचार मचा?
निर्धन को धनी खा रहे हैं
यह बर्बर नर-संहार मचा!

वैभव विलास के उच्च नगर
हैं तुम्हें उधर ही खींच रहे,
फैला कर इन्द्रजाल अपना
अन्तर के लोचन मींच रहे!

ओ आत्मसाधना के यात्री !
तेरा पावन आवास यहाँ,
निर्मल नभ, धरणी हरित जहाँ
लाती है वायु सुवास जहाँ।

भोले भाले ! सच्चे किसान
तुमको न कभी भटकावेंगे,
अपने खेतों खलिहानों का
वे तुमको वृत्त सुनावेंगे।

कैसे कहती है रात, दिवस
कैसे तुमको समझावेंगे,
हे ग्रामदेवता ! ग्राम तुम्हें
पाकर कृतार्थ हो जावेंगे।

आओ नवयुग के निर्माता !
आओ नवपथ के निर्माता !
आओ नवयुग के निर्माता !
आओ नवजीवन के दाता !

हैं जीर्ण शीर्ण ये ग्राम
जहाँ युग-युग से छाया अंधकार,
ये रौरव-भव में बसे हुए
सुन लो तुम इनकी भी गुहार।

घन चले फूट कर बरस पड़े
भरने अमृत से भव सारा,
बापू भी आश्रम से बाहर
बह चली किधर गंगा धारा ?

घन लगे बरसने रिमिक झिमिक
कुछ हुआ और भी अंधकार,
बह चला प्रभंजन भी सन सन
बिजली चमकी ले द्युति अपार ।

बापू कटि-बद्ध चले आश्रम
को त्याग, व्यग्र आश्रमवासी !
इस समय कहाँ इस असमय में
जाते हैं अपने अधिवासी ?

आश्रमवासी चिंतित व्याकुल
कहते जाने का यह न समय,
'विश्राम करो बापू ! चलना प्रातः
जब हो शुभ अरुणोदय !'

दुर्दिन है, सुदिन नहीं है यह
हम सभी चलेंगे साथ संग,
एकाकी जायँ न आप कहीं
तम सघन, गगन का श्याम रंग ।

पर सुनते कब किसकी बापू
वे सुनते आत्मा की पुकार,
वे सुनते निज प्रभु की पुकार
चल पड़ते खुलता जिधर द्वार !

रह गई विनय अनुनय करती
पर, कहाँ किसी की वे मानें ?
वे चले आज एकाकी ही
उन्नत ललाट, सीना ताने !

कर में लेकर अपनी लकुटी
तन में मोटा उजला कंबल,
दृढ़ दृष्टि, सुदृढ़ गति प्रगति पुष्ट,
देने को ग्रामों को संवल !

वे चले स्वयं घन गर्जन से,
विद्युत् के अविचल वर्जन से,
प्रलयंकर भीम प्रभंजन से,
जलनिधि के भीषण तर्जन से !

रह गए देखते खड़े सभी
चित्रित से, जड़ित, चकित, विस्मित !
कितने दुर्जय निर्भय हैं ये
यह भी विभूति प्रभु की विकसित !

बापू आश्रम से दूर दूर थे
बहुत दूर अपनी धुन में,
जा रहे चले गंभीर शान्त
आत्मा के मधुमय गुंजन में।

बह रहा प्रभंजन था रह रह,
बापू बढ़ते झोंके सह सह,
बाधाओं की विपदाओं की
प्राचीरें जाती थीं ढह ढह!

बिजली बन करके कंठहार
बापू के उर में सजती थी,
घन थे प्रसन्न, अमृत जल था,
वंशी स्वागत की बजती थी।

ग्रामों की उत्सुक आँख लगी थी
अपने नव अभ्यागत पर,
किसको सौभाग्य प्रदान करें
सब उत्कंठित थे स्वागत पर!

पथ की लतिकाएँ फूल रहीं
फूलों के घट थी साज रहीं,
मधुभर के मंगल घट में
प्रतिहारी बनी विराज रहीं।

मन में प्रसन्न खगमृग अतीव
वरदान उन्होंने पाया था,
आज ही अहिंसा का स्वामी
गृह तज कर बन में आया था।

थे मुदित मयूर मयूरी मिल
हिलमिल कर गरवा नाच रहे,
सुरधनु से पंख खोल अपने
निज भाग्य-पृष्ठ थे बाँच रहे।

कर्कश कठोर थी भूमि बनी
करुणा जल पा करके कोमल,
बापू प्रसन्न उन्मुक्त सबल
थे चले जा रहे उत्शृंखल।

झंझा की इधर झकोरें थीं
हिमगिरि पर उधर महान चला,
वर्षा की बूँदें थीं सहस्र
पर उधर भीम तूफ़ान चला।

ग्रामों का नव उत्थान चला,
यह भव का नव निर्माण चला!
पद दलितों का अरमान चला,
आत्माहुति का बलिदान चला।

थे चरण चिह्न बनते पथ में
दृढ़ पुष्ट चरण, मिट्टी धँसती ,
इतिहास लिख रही थी दुनिया
थी आज नई बस्ती बसती !

कितनी ही आँखें बिछ पथ पर
थी पदरज ले धरती शिर पर ,
वनबालायें वन घूम घूम
गाती थीं गायन मादक स्वर !

बापू चल आये दूर
जहाँ निर्जन वन था एकांत प्रांत ,
था गाँव एक सेगाँव
जहाँ दो चार धाम थे खड़े शांत !

जैसे ग्रामों के प्रतिनिधि बन
वे हों स्वागत में सावधान !
सौभाग्य समझ अपने गृह का
ले गए उन्हें गृह में किसान !

बीती वह रात वहीं उन
कुटियों में जब पुण्य प्रभात हुआ ,
देखा दुनिया ने वहीं एक
था मधुर ग्राम नवजात हुआ ।

सेवाग्राम

वर्धा से दूर सुदूर बसा है
एक मनोहर मधुर ग्राम,
जिसका है सेवाग्राम नाम
हैं जिसमें लघु लघु बने धाम।

है यही देश का हृदय तीर्थ
है यही देश का हृदय प्राण,
हैं उठते यहीं विचार दिव्य
जो करते जनगण राष्ट्र-त्राण।

नवयुग के नये विधाता की
यह है अजीब छोटी बस्ती,
जिसमें नवीन जीवन का क्रम
जिसमें नवीन दुनिया हँसती।

यह तपोभूमि, यह कर्मभूमि
यह धर्मभूमि है तेजमयी,
जिसमें सुलझाई जाती हैं
सब जटिल ग्रन्थियाँ नई-नई।

यह है हिमाद्रि उत्तुंग धवल
जिससे बहकर गंगा धारा,
है हरा भरा उर्वर करती
भारत का गृह आँगन सारा।

है यहीं सौर्य मंडल जिसके
चारो ही ओर प्रकाशपुंज,
करते रहते हैं परिक्रमा
सोचते दिव्य आरती कुंज।

लेकर प्रकाश की रश्मि कर्म की
गतिविधि, रति मति का संवल,
अगणित नक्षत्र उदित होते
सुंदर स्वदेश नभ में निर्मल।

यह शक्ति-केन्द्र, प्रेरणा-केन्द्र,
अर्चना-केन्द्र, साधना-केन्द्र,
वंदन अभिनंदन करते हैं
जिसमें आकर नर औ' नरेन्द्र।

है यहीं मूर्ति वह तपोमयी
जो देती रह-रह नवल स्फूर्ति,
इस देश अभागे की झोली
भरती है संवल नवल पूर्ति,

वह मूर्ति जिसे कहते बापू
गाँधी, मनमोहन, महात्मा,
रहती है यहीं, यहीं सोती
जगती प्रणम्य वह युगआत्मा।

गीत

ऊषा के मधुमय अंचल में।

सुन पड़ता है घंटा-ध्वनि घन,
उठ पड़ते आश्रमवासी जन,
प्रार्थना समय आता पावन;

चल पड़ते सब पूजास्थल में
ऊषा के मधुमय अंचल में।

बापू की कुटिया के समीप,
आ जुड़ती जनता औ' महीप,
खिलता भक्तों का एक द्वीप,

उठता है अमृत स्वर पल में,
ऊषा के मधुमय अंचल में।

प्रातस्मरामि वह आत्म तत्त्व,
सच्चित्सुख जिसका है महत्त्व,
हम उसी ब्रह्म के शुद्ध सत्त्व,

केवल न धूलिकण भूतल में
ऊषा के मधुमय अंचल में।

छाती है उर में महाशान्ति,
हटती है उर की महाभ्रान्ति,
फटती युगयुग की चिर अशांति,

खिलता प्रकाश अंतस्तल में
ऊषा के मधुमय अंचल में!

रह रह बापू की तपोमूर्ति,
तन मन में देती नई स्फूर्ति,
होती अभाव की आज पूर्ति,

जीवन के इस सुवर्ण पल में।
ऊषा के मधुमय अंचल में।

खिंचता है सहसा वही चित्र,
ज्यों बोधिसत्त्व बैठे पवित्र,
पदतल सेवक जनता विचित्र,

सब मंत्र मुग्ध भवमंगल में।
ऊषा के मधुमय अंचल में।

प्राणों का कल्मष पिघल पिघल,
चाहता भागना निकल निकल,
वह रश्मि फूटती है निर्मल,

पथ दिखलाता कोलाहल में।
ऊषा के मधुमय अंचल में।

वह पुण्यवान वह भाग्यवान,
जिसने यह क्षण पाया महान,
जब प्रभु उर में हो भासमान,

बल आ जाता है निर्बल में।
ऊषा के मधुमय अंचल में।

भ्रमण

संध्या की स्वर्णिम किरणें जब
ढल छा जाती हैं तरुओं पर,
कुछ कलरव करते सा उड़ते
खगकुल तृण चुन चुन अपने घर।

गोधूलि बनी संध्या - समीर
पथ में उड़ती है कभी कभी,
लौटते कृषक खलिहानों से
कंधे धर हल पुर वस्त्र सभी।

तब चलती है टोली पथ में
कुछ इने गिने मस्तानों की,
घूमने साथ में बापू के
आज़ादी के दीवानों की।

'लो चलो घूमनेवाले सब'
बापू कहते आकर बाहर,
सुनकर वाणी आश्रमवासी
आते कितने ही नारी नर।

कुछ नन्हें नन्हें बच्चे भी
आकर कहते हैं मचल, मचल,
'बापू छात चलेंगे अंबी
आगे बढ़कर उछल-उछल।

मातायें कहती चल न सकेगा
खेल अभी बेटा! घर में,
बापू कुछ क़दम चला देते
शिशु का कर लेकर निज कर में।

आँसू आते हैं नहीं कभी
है हँसी खेलती अधरों पर,
वह जादू बापू कर देते
बच्चों से बातें कर मनहर।

यों ही औरों को भी तो वे
चलना भव पथ में सिखलाते,
सब चलते हैं दो-चार क़दम
फिर शिशु से पीछे रह जाते।

शिशु सोचा करता खड़ा खड़ा
वह थोड़ा और बड़ा होता,
तो साथ-साथ चलता बापू के
यों न कभी पिछड़ा होता।

चलते अनेक हैं साथ-साथ
कुछ ही तो ही हैं चल पाते,
कुछ पहले ही, कुछ बीच,
अंत में कुछ, कुछ पीछे रह जाते।

यह भ्रमण खोल सा देता है
उनके जीवन का गहन मर्म,
जो साथ चल सकें बापू के
दो चार नित्य जो निरत-कर्म।

कितनी गति इनकी तीव्र
चले तब चले, नहीं रोके रुकते,
कुछ भी आये सामने, शीत
हिम, विघ्न, कहाँ पर ये झुकते?

इनके चरणों में ही चल चल
इस गिरे राष्ट्र को बढ़ना है,
जिस ओर चले जनगणनायक
घाटी पर्वत पर चढ़ना है!

बापू न चलो तुम इस गति से
जिससे न कभी जन बढ़ पाये,
अग्रणी! अकेले पहुँचो तुम
सब जनगण यहीं पिछड़ जायें।

जब चलो, चलो इस गति मति से
हम भी चरणों में चल पायें,
इस तिमिरावृत भारत नभ में,
नवजीवन का प्रभात लायें।

है जिनका निश्चित ध्येय
स्पष्ट है मार्ग, और साधन निर्मल,
उनके चरणों के अनुगामी
होंगे यात्रा में क्यों न सफल?

उगता राष्ट्र

आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत संघर्षों में।
कहीं विजय है, कहीं पराजय
राष्ट्र उगा करता वर्षों में।

वीरव्रती हैं डटे समर में
भीरु खड़े हैं बनकर दर्शक,
अपने तन का मोह जिन्हें हो
उनको रण क्या हो आकर्षक?

हम रण के कंकण पहने हैं
मरण हमें त्योहार पर्व है,
पुरुष पराक्रम दिखलाते हैं
बल विक्रम का जिन्हें गर्व है।

मिलता है उत्कर्ष सभी को
पार उतर कर अपकर्षों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत संघर्षों में।

मस्जिद से मन्दिर लड़ते हैं
गिरजा से लड़ते बिहार मठ,
धर्म अनर्थ कर रहा कितना
करते हैं अधर्म पामर शठ।

वर्ण वर्ण में छिड़ा द्वन्द्व है
जाति-जाति से जूझ रही है,
स्वार्थ किए है व्यग्र सभी को
सुमति सुगति कब सूझ रही है?

आज जागरण है, जीवन है
शक्ति जग रही निष्कर्षों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत संघर्षों में।

वृद्धों से लड़ रहा तरुण दल
उनमें भी सेवा-उमंग है,
स्वतंत्रता के नव गीतों में
साम्यवाद का चढ़ा रंग है।

भू-पतियों से कृषक लड़ रहे
धनिकों से हैं, श्रमिक युद्धरत,
जीवन नहीं, जीविका चहिए
गरज रहा है आज लोकमत!

धधकी महा उदर की ज्वाला
रणचंडी के प्रण - हर्षों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत संघर्षों में।

साम्राज्यों की नीव कँप रही
कँपती राज्यों की प्राचीरें,
जन-सत्ता जग पड़ी आज है
अब असह्य जनता की पीरें।

आज दुर्ग की ईंटें ढहतीं
वंकिम भ्रकुटि उठी राजों में,
जहाँ क्रूर तांडव प्रभुता का
लज्जा लुटती है ताजों में।

सिंहद्वार खुल गए सदा को
किसी तपस्वी के स्पर्शों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत संघर्षों में।

हम तो हैं उनके मतवाले
बलि-पथ पर जो रक्त चढ़ाते,
विजय मिले, या मिले पराजय
अपने शीश दान कर जाते।

हम तो हैं उसके मतवाले
कौन नहीं होगा मतवाला ?
जिसने गोवर्धन उँगली पर
उठा लिया, दुख भार सँभाला ।

उन विशाल बाँहों के बल पर
जय अपनी रण दुर्धर्षों में ।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा,
अपना शत-शत संघर्षों में ।

धर्मों के पाखंडवाद का
भ्रम मिटता है धीरे - धीरे,
राष्ट्र धर्म जग रहा मोक्षप्रद
गंगा यमुना तीरे-तीरे ।

आज मातृ-मंदिर उठता है
बलिदानों की अचल शिला पर,
तरल तिरंगा लहर रहा है
विजय-केतु बन सबके ऊपर ।

कोटि-कोटि चरणों की ध्वनि में
कोटि-कोटि स्वर के घर्षों में ।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत संघर्षों में ।

हलधर से

देखो, हुआ प्रभात, उधर
प्राची में है लाली छाई,
जगो किसानो आज तुम्हारे
जगने की बेला आई!

जब तक तुम न जगोगे, तब तक
नहीं जगेगा हिन्दुस्तान,
हिन्दुस्तान बसा है तुम में
क्या तुम हो इससे अनजान?

गाँवों में पुरई पालों में
आज जागरण-शंख बजे,
चले तुम्हारी टोली प्यारे!
तब भारत की सैन्य सजे।

जगा रहा युग, जगा रहा जग
जागो हे सोये भाई,
जगो किसानो आज तुम्हारे
जगने की बेला आई।

तुम्हें नहीं क्या ज्ञात ? तुम्हारे
बल पर चलते हैं शासन,
तुम्हें नहीं क्या ज्ञात ? तुम्हारे
धन पर निर्भर सिंहासन।

तुम्हें नहीं क्या ज्ञात ? तुम्हारे
श्रम पर सब वैभव साधन,
तुम्हें नहीं क्या ज्ञात ? तुम्हारी
बलि पर है सब विजय-वरण।

करुणा है यह सभी तुम्हारी
जो वसुधा है हरियाई,
जगो किसानो आज तुम्हारे
जगने की बेला आई।

तुम्हें नहीं क्या ज्ञात ? तुम्हीं हो
जननी की अगणित संतान!
तुम्हें नहीं क्या ज्ञात ? तुम्हीं पर
निर्भर है अपना उत्थान!

तुम्हें नहीं क्या ज्ञात ? राष्ट्र के
तुम हो कर्मठ कर्णाधार !
बिना तुम्हारे उठे न उठ
सकती है उन्नति की मीनार ।

पौ फट चुकी हट गए तारे
किरणें हैं भू पर छाई,
जगो किसानो, आज तुम्हारे
जगने की बेला आई !

कोटि कोटि हो तुम्हीं धीरधर !
अपनी जननी की सन्तान,
हिन्दू, मुसलिम, सिक्ख, पारसी,
जैन, बुद्ध या हो क्रिस्तान,

हल है झंडा सदा तुम्हारा
हल के गाओ गौरव गान !
हल से हल हों सभी समस्या
सहल बने अपना मैदान ।

चलो आज तुम कोटि कोटि मिल
बही जागरण-पुरवाई,
जगो किसानो, आज तुम्हारे
जगने की बेला आई !

हल के बल पर तुम उपजाते
ऊसर में भी गेहूँ धान,
हल के बल पर तुम देते हो
क्षुधित तृषित को जीवन दान।

हल का पूजन करो आज फिर
हल की उठे निराली तान,
हल से हल हों सभी समस्या
हलका होवे भार महान!

हल के गाओ गीत निराले
बढ़ो, विजय वरने आई।
जगो किसानो, आज तुम्हारे
जगने की बेला आई!

चले तुम्हारा हल धरणी में
लिखे तुम्हारे बल के लेख,
शस्य श्याम जो भी लहराता
श्रमसीकर की जिन पर रेख।

चले तुम्हारा हल धरणी में
ऊसर बनें खेत खलिहान,
कूड़े का भी भाग्य जग उठे
अन्नराशि हो वहाँ महान!

दीन न निर्धन तुम रह सकते
साहस ने ही जय पाई
जगो किसानो, आज
तुम्हारे जगने की बेला आई !

कितने भोले हो ग़रीब हो
इसका तुमको ज़रा न ध्यान,
अपनी ही अज्ञान दशा में
पाते हो तुम कष्ट महान।

तुम अपने को पहचानो तो
फिर न रहेगा यह दुख दैन्य,
निर्बल की सब बलि देते हैं
बली सजाते हैं रण सैन्य !

देख रही माता अधीर हो
उठो लाल जागो भाई।
उठो किसानो, आज तुम्हारे
जगने की बेला आई।

मज़दूर

पृथ्वी की छाती फाड़
कौन ये अन्न उगा लाता बाहर ?
दिन का रवि, निशि की शीत,
कौन लेता अपनी सिर आँखों पर ?

कंकड़ पत्थर से लड़ लड़कर
खुरपी से और कुदाली से,
ऊसर बंजर को उर्वर कर
चलता है चाल निराली ले।

मज़दूर ! भुजायें वे तेरी
मज़दूर शक्ति तेरी महान,
घूमा करता तू महादेव !
सिर पर लेकर के आसमान।

पाताल फोड़कर महाभीष्म !
भूतल पर लाता जलधारा,
प्यासी भूखी दुनिया को तू
देता जीवन संबल सारा !

खेती से लाता है कपास
धुन धुन बुन कर अंबार परम ,
इस नग्न विश्व को पहनाता
तू नित्य नवीन वस्त्र अनुपम।

नंगी घूमा करती दुनिया
मिलता न अन्न भूखों मरती ,
मज़दूर ! भुजायें जो तेरी
मिट्टी से नहीं युद्ध करती !

तू छिपा राज्य उत्थानों में ,
तू छिपा कीर्ति के गानों में ,
मज़दूर ! भुजायें तेरी ही
दुर्गों के शृंग उठानों में।

तू छिपा नवल निर्माणों में
गीता में और पुराणों में ,
युग का यह चक्र चला करता
तेरी पद-गति की तानों में।

तू ब्रह्मा विष्णु रहा सदैव
तू है महेश प्रलयंकर फिर।
हो तेरा तांडव शंभु ! आज
हो ध्वंस, सृजन मंगलकर फिर !

जागो, हुआ विहान !

किस रजनी के मधुर अंक में
खोईं अलसित घड़ियाँ ?
राज्य ध्वंस हो गया, लुट गया
वैभव माणिक-मणियाँ !

देखो घर की श्री-संपति का
कौन बना अधिराज ?
जागो, जागो, ऐ स्वदेश !
लुट गया तुम्हारा ताज !

मेरे हिन्दुस्तान !
जागो, हुआ विहान !

काशी लुटी, अयोध्या अपनी
मथुरा लुटी विशाल,
उठा ले गये परदेशी
भर भर सुवर्ण के थाल !

इन्द्रप्रस्थ के सिंहासन पर
देखो बैठा कौन ?
जागो जागो ऐ स्वदेश
है व्यथा जगाती मौन !

मेरे हिन्दुस्तान !
जागो, हुआ बिहान !

यह दरिद्र का वेश
बन गये हो भिक्षुक कंगाल !
छिपा रहे हो फटे जीर्ण-
वस्त्रों से तन कंकाल !

दो दो दाने को देते हो
कंपित हाथ पसार,
दग्ध कपोलों पर
बहती रहती आँसू की धार !

मेरे हिन्दुस्तान !
जागो, हुआ बिहान !

मुट्ठीभर सेना का शासन,
तुम असंख्य आधीन ?

इससे ज़्यादा और तुम्हारी
क्या होगी तौहीन !

रणभेरी की कठिन चोट
करती तुमको आह्वान,
जागो, जागो, कोटि कोटि
भारत माँ की संतान !

मेरे हिन्दुस्तान !
जागो, हुआ बिहान !

भीम और अर्जुन के पुत्रो,
बने हुए हो दास !
ऐसे पराधीन जीवन से
मधुर मृत्यु का पाश !

कुरुक्षेत्र में गूँज रहा है
भैरव शङ्ख निनाद,
जागो, जागो, आज
पाण्डवों के रण के उन्माद !

मेरे हिन्दुस्तान !
जागो, हुआ बिहान !

जीना हो तो जियो आज
बनकर स्वतन्त्र हे वीर !
नहीं, समा जाओ नीचे
पृथ्वी की छाती चीर !

जागो, जागो आज महा-
भारत के भीषण गान !
जागो, जागो, भूकंपित
करनेवाले प्रस्थान !

मेरे हिन्दुस्तान !
जागो, हुआ बिहान !

हमको ऐसे युवक चाहिये

ब्रह्मचर्य से मुखमंडल पर
चमक रहा हो तेज अपरिमित,
जिनका हो सुगठित शरीर
दृढ़ भुजदंडों में बल हो शोभित।

जिनका हो उन्नत ललाट
हो निर्मल दृष्टि ज्ञान से विकसित,
उर में हो उत्साह उच्छ्वसित
साहस शक्ति शौर्य हो संचित।

देश प्रेम से उमड़ रहा
जिनक वाणी में जय जय स्वर,
हमको ऐसे युवक चाहिए
सकें देश का जो संकट हर!

रस विलास के रहे न लोलुप
जिनमें हो विराग वैभव का,
अतुल त्याग हो छिपा देशहित
जिन्हें गर्व हो निज गौरव का।

सेवाव्रत में जो दीक्षित हों
दीन दुखी के दुख से कातर,
पर संताप दूर करने को
ललक रहा हो जिनका अंतर।

बने देश के हित वैरागी
जो अपना घरबार छोड़कर,
हमको ऐसे युवक चाहिए
सकें देश का जो संकट हर।

सदा सत्य पथ के अनुयायी
जिन्हें अनृत से मन में भय हो,
दुर्बल के बल बनने के हित
जिनमें शाश्वत भाव उदय हो।

जिन्हें देश के बंधन लखकर
कुछ न सुहाता हो सुख साधन,
स्वतंत्रता की रटन अधर में
आज़ादी जिनका आराधन।

सिर को सुमन समझकर जो
अर्पित कर सकते हों माँ पर,
हमको ऐसे युवक चाहिए
सकें देश का जो संकट हरं।

ओ तरुण !

ओ तरुण ! तेरी ज़माना
देखता है राह !
किधर तेरी वाह उठती
किधर तेरी आह !

तू रहे औ' हो जवानी,
देश हो लाचार ?
तो तुझे, तेरी जवानी
पर, अरे धिक्कार !

देखता तू बाट किसकी ?
देख अपना जोश,
देख जननी वंदिनी, कब से
पड़ा बेहोश !

रक्त की बूँदें न फिर भी
जल बनें अंगार,
दूर हट, मत मुख दिखा
तो मातृ भू के भार!

अरुण आँखों में रहें, घिरते
प्रलय के मेघ,
चाल में बिजली चमकती हो
सघन तम देख,

अभय मुद्रा में उठा हो हाथ
बन वरदान,
मस्तकों पर पथ बना, चल
ओ प्रबल तूफ़ान!

बढ़ उधर, हुंकार भर, हो
जिधर गर्जन घोर,
छीन ले झंडा कि जिनका
घट गया हो ज़ोर।

आज मानवता तुझे ही
देखती हे वीर!
आँख में आँसू न हो, वह
खींच दे तस्वीर!

ओ नौजवान !

ओ नौजवान !
ओ नौजवान !

तेरी भ्रू-भंगों से सीखा करता
है प्रलय नृत्य करना,
तेरी वाणी से सीखा करता
काल ताल अपनी भरना।

तेरी उमंग से सिंधु तरंगें
सीखा करती हैं उठना,
तेरे मानस से सीखा करता
गगनांगन विशाल बनना।

मेरे असीम ! सीमा मत बन
तेरी ही पृथ्वी आसमान !
ओ नौजवान !
ओ नौजवान !

तेरे उभार के साथ उभरती है
दुनिया में सुंदरता,
तेरे निखार के साथ निखरती है
दुनिया में मानवता।

बनता है बुड्ढा विश्व तरुण
छाती है अंबर में लाली,
पतझर छिपता है दूर भाग
फूटती वसंती हरियाली!

बुलबुल गुल को चटकाती है
कोकिल भरती है नई तान।
ओ नौजवान!
ओ नौजवान!

तेरी मस्ती के आलम में
दुनिया को मिल जाती मस्ती,
तेरी हस्ती की बरकत में
सब पाते हैं अपनी हस्ती।

क्या लेगा कोई दान और
तू जान किए रहता सस्ती,
तेरे बसने के साथ साथ
है एक नई बसती बस्ती।

तू खुद ही एक ज़माना है
गा रही जवानी जहाँ गान !
ओ नौजवान !
ओ नौजवान !

यह क़ौम तुझे ही देख देख
होती मन में मतवाली है,
फिर से बुझे हुए दीपक में
उठने लगती लाली है !

जो मुरझ चुके पानी न मिला
आती उनमें हरियाली है,
तू आता क्या तेरे पदनख से
फट जाती अँधियाली है !

तू प्राची का पावन प्रभात
तू कंचन किरणों का वितान !
ओ नौजवान !
ओ नौजवान !

तू नई पौध अरमानों का
तू नया राग मस्तानों का,
तू नया रंग, तू नया ढंग
दीवानों का, मर्दानों का।

तू नया जोश, तू नया होश
अपनों का औ' बे गानों का,
तू नया ज़माना, नई शान
ईमान नया ईमानों का!

है उथल पुथल होती रहती
लख तेरे पाँवों के निशान।
ओ नौजवान!
ओ नौजवान!

प्रयाण-गीत

युग युग सोते रहे आज तक
जागो मेरे वीरो तो!
तरकस में बँधे हुए जीर्ण
अब चमको मेरे तीरो तो!

यह भी क्या जीवन है जिसमें
हो यौवन की लहर नहीं?
चढ़ ख़राद पर, तिलतिल कटकर
चमको मेरे हीरो तो!

यौवन क्या जिसके मुखपर
लहराता शोणित-रंग नहीं?
यौवन क्या जिसमें आगे
बढ़ने की अमर उमंग नहीं?

शैशव ही सुखमय है उस
यौवन के आने के पहले,
मर मर कर जीने की जिसमें
उठती तरल तरंग नहीं!

चढ़ती हुई जवानी में तो
आगे बढ़ जाओ प्यारे!
बढ़ती हुई रवानी में तो
आगे बढ़ जाओ प्यारे!

पीछे ही हटना है फिर
आगे जाने का समय नहीं,
इस उभार की यादगार में
कुछ तो गढ़ जाओ प्यारे!

रूपराशि की दीप शिखा पर
मरने वाले परवाने!
प्रेम-प्रेम के मधुर नाम को
रटने वाले दीवाने!

वह भी क्या है प्रेम न जिसमें
छिपी देश की आग रहे?
जन्मभूमि के चरणों में मिट
अमिट! तुझे दुनिया जाने!

अभियान-गीत

आज चली है सेना फिर से
धीर वीर मस्तानों की,
आज़ादी के दीपक पर है
भीड़ लगी परवानों की।

मनमोहन है शंख बजाता
कुरुक्षेत्र में हलचल है,
वर्धा के आँगन में सजता
फिर शूरों का दल बल है।

चले जवाहर से नरनाहर
बनने बंदी दीवाने,
औ' आज़ाद कफ़स को लेने
पीने विष के पैमाने।

कौन रोक सकता होली
अपने बढ़ते दीवानों की,
आज चली है सेना फिर से
धीर वीर मस्तानों की!

वे कल चले, आज हम जाते
परसों उनकी बारी है,
दर-दर में उत्सव जलूस है
घर-घर में तैयारी है।

मिला सुयोग युगों में हमको
माँ के पद का पूजन है,
कितने शीश चढ़े चरणों में
आज वृहद आयोजन है!

अंबर में ध्वनि गूँज रही है
माँ की जय-जय तानों की,
आज चली है सेना फिर से
धीर वीर मस्तानों की।

सत्याग्रही बने वह जिसका
देशप्रेम से नाता हो,
प्राणों से भी प्यारी जिसको
अपनी भारत-माता हो।

प्राण जायँ, छोड़े न प्रण कभी
ऐसी टेक निभाता हो,
स्वतंत्रता की रटन अधर में
जिसका भाग्य विधाता हो।

बलिवेदी पर भीड़ लगी है
आज अमर बलिदानों की,
आज चली है सेना फिर से
धीर वीर मस्तानों की!

जागरण

आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया,
नवयुग ने नव तन नव मन दे
नव चेतन है लहराया।

आज पददलित पुनः उठ रहे
सह न सका अपमान अधिक चित,
पद-रज भी ठोकर खा करके
सिर पर चढ़ आती उत्तेजित।

बंदीगृह के टूट चुके हैं
लौह-कपाट पद-प्रहार से,
हथकड़ियों की लड़ियाँ टूटीं
वीरों के बलिदान-भार से।

विद्रोही हैं राष्ट्र-विधाता
सिमटी मायावी की माया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

मिटी निराशा की अँधियाली
आशा की अरुणिमा उषा है,
नव शोणित की लहर उठी है
शिथिल शक्ति ने पिया नशा है।

भुज दंडों के लौह दंड में
वज्र-शक्ति जग रही आज है,
जिसके वक्षस्थल में बल है
उसके सिर पर सदा ताज है।

आज आत्मबल ऊपर उठता
पशु-बल पद-तल पर झुक आया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

दासों के पददलित हृदय में
स्वतन्त्रता की जगी आग है,
कालों ने है शीश उठाया
महानाश का छिड़ा राग है।

कायर भी बढ़ते हैं रण में
वीर-भाव का वह प्रवाह है,
समर सिंधु तरते मतवाले
जिनमें बल विक्रम अथाह है।

डूब गये दुर्बल कुछ बढ़कर
धीरों ने दृढ़-तट है पाया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया,

आज ग़ुलामों के भी दिल में
उमड़े आज़ादी के शोले,
जुगनू से लगते आँखों में
विस्फोटक ये बम के गोले।

महानाश का राग छेड़ते
बढ़ते आगे विप्लववाले,
कालकूट के तिक्त घूँट को
पीते हैं मधु-सा मतवाले।

सिंधु विंदु में आ सिमटा है
वह उत्साह रक्त में छाया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

अपने घर पर आग लगाकर
फाग खेलते हैं मतवाले,
शोणित के रँग से रँगते हैं
मतवालों के कवच निराले।

नहीं हाथ में धनुष-बाण है
नहीं चक्र शूली कृपाण है,
लड़ते हैं फिर भी मतवाले
शीश सत्य का शिरस्त्राण है।

बलिदानों के मुंडमाल से
हरि का सिंहासन थहराया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

आज मरण में जीवन जगता,
यों तो जीवन बना भार है,
बलिदानों की ईंट बनें हम
यह सबके मन की पुकार है।

बढ़ चलते जड़ चरण चपल हो
रण-प्रांगण में हृदय हुलसता,
वैभव के विलास के गृह में
त्यागी का तप तेज झुलसता।

आत्मत्याग की अमर-भावना ने
मृतकों को अमृत पिलाया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

कणिका

मेरे जीते मैं देखूँ
तेरे पैरों में कड़ियाँ ?
क्यों न टूट पड़ती हैं मुझ पर
तो नभ की फुलझड़ियाँ ?

यह असह्य अपमान
जलाता है अन्तर में ज्वाला।
माँ ! कैसे मैं ही पी लूँ
प्रतिशोध गरल का प्याला ?

प्राण और प्रण की बाज़ी का
लगा हुआ है फेरा।
उतरेंगी तेरी कड़ियाँ
या उतरेगा सिर मेरा !

नव झाँकी

घास - पात के टुकड़ों पर
लुटती है माखन मिसरी ;
गंजी और जाँघिया पा
पीताम्बर की सुधि बिसरी ।

चक्की की घरघर में भूला ,
लेकर चक्र चलाना ,
बेतों की बेदर्द मार में
सुना वेणु का गाना ।

ज़ंजीरों ने चुरा लिया
वनमाला की छवि बाँकी ,
सिकचों में लख आया हूँ
मनमोहन की नव झाँकी ।

बेतवा का सत्याग्रह

गंगा से कहती थी यमुना
तुम बहन, दूर से आती हो,
जाने कितने ही प्रान्त नगर
छू करके तीर्थ बनाती हो।

कुछ कहो बहन, ना, आज
देश की ऐसी पावन नव्य कथा,
जिससे जागृति की ज्योति मिले
यह भिले हृदय की तिमिर-व्यथा!

गंगा बोली, यमुने! तुम भी
करती हो मुझसे अठखेली?
तुम मुझसे पूछ रही रानी
कुछ नये रंग की रँगरेली?

तुमने वंशी का गान सुना
तुमने गीता का ज्ञान सुना,
यमुने! तुमको क्या बतलाऊँ ?
तुमने सब वेद पुराण सुना।

छोड़ो उन वेद पुराणों को,
छोड़ो गीता के गानों को,
कुछ नवयुग की प्रिय बात कहो,
छोड़ो भूले आख्यानों को।

तो नवयुग की तुम सखी बनी
नवयुग को तुमको लगी हवा,
आ तो दूँ तुझको एक धौल
हो जाये तेरी ठीक दवा।

यमुने! तुम कितनी भोली हो ?
भूली बन बात बनाती हो,
भूले जा सकते क्या मोहन
तुम मन में बात चुराती हो।

मैं छीन नहीं लूँगी तुमसे
गोदी से श्याम सलोने को,
तुम बात बनाकर यों न लगाओ
काजल श्याम दिठौने को।

यमुने ! तुम सदा सुहागिल हो
तुमक प्यारे घनश्यान रहें,
गंगा गरीबिनी नहीं धनी है
घर में राजाराम रहें।

यमुने ! भूला जा सकता है
क्या गीता का भी अमर गान ?
जो है अतीत का गर्व लिए
घेरे भविष्य औ' वर्तमान।

रानी ! मेरी तुम भूल गईं
इतिहास स्वयं दुहराता है,
वह कुरुक्षेत्र का मनमोहन
अवतार नये धर आता है।

होता है फिर से द्वंद्व युद्ध
वह भारत नहीं अंत होता,
कौरव पांडव फिर लड़ते हैं
धीरज हा हंत ! विश्व खोता।

भूमिका बहुत तुम बाँध चुकीं
अब तुम अपना मंतव्य कहो,
किस ओर चाहतीं ले जाना
वह मर्म कथा, गंतव्य कहो।

गंगा बोली—मेरी सजनी
मत आपस में यों रार करो,
लो सुनो कथा मैं कहती हूँ
अब सुनो हृदय उल्लास भरी।

बुंदेलखंड जनपद महान
गूँजे हैं जिसके अमर गान,
मैं आज उसी की कहती हूँ
लघु कथा, किंतु, अति कीर्तिवान।

बुंदेलखंड, सुन्दर स्वदेश
बेतवा जहाँ गलहार बान,
बहती रहती सींचती धरा
वन उपवन में शृंगार बनी।

बुंदेलखंड, गौरव अखंड
जिसके वर वीर लड़ैतों ने,
कंपिते दिगंत को किया
जिसे वर्णित है किया अल्हैतों ने।

इस नवयुग में भी नये वीर
ध्रुव धीर जहाँ पर वर्तमान,
जिसके बलिमय सत्याग्रह
के गीतों से अंबर गीतमान।

हम्मीरदेव का गौरवस्थल
अब भी हमीरपुर बसा जहाँ,
बेतवा जहाँ इठला इठला
खेला करती है यहाँ वहाँ।

थे एक दिवस, कुछ कृषक
जा रहे जिनके पास छदाम नहीं,
बेतवा पार कर, बेचारों के
धाम बने थे, जहाँ वहीं।

घटिया देखकर आ पहुँचा
बोला—'बदमाशो! चोरी मर,
आ पहुँचे तुम इस पार, इस तरह
अच्छा दो अब अपना 'कर'।

देते क्या दीन दुखी किसान?
पैसा भी होता पास कहीं,
तो क्यों जाते जल में हिलकर
जाते क्यों चढ़कर, नाव नहीं?

बोले किसान 'सरकार!
एक भी पैसा पास नहीं अपने,
फिर दूर घाट से हिल करके
आये इस पार यहाँ, हम ये।'

'मैं कुछ न जानता हूँ
करते हो बहस, उतारो तो कपड़े,
नंगे जाओ अपने घर को
देखता बहुत तुम हो अकड़े।'

घाटिया बड़ा था क्रूर, निठुर
उसको था धन से बड़ा लोभ,
यदि छूट जाय धेला तो भी
होता था उसको बड़ा क्षोभ।

घाटिया बेरहम हुआ,' कहा—
आओ मेरे ओ जमादार!
ये बहस बहुत मुझसे करते
आये करके बेतवा पार!

'हैं घाट छोड़कर आये हम
कहते 'कर' तुम्हें नहीं देंगे',
'ले लो कपड़े लत्ते इनके
जो करना हो, ये कर लेंगे।'

जैसे मालिक, वैसे नौकर
वे कड़े कसाई-से थे फिर,
बोले—'खोलो कपड़े लत्ते
वरना, हंटर खाओगे फिर।'

अधनंगे यों ही रहते हैं
भोले भाले मारे किसान,
उस पार प्रहार यह हा! विधिना!
यह न्याय निठुर तेरा महान!

कपड़े लत्ते खुलवा करके
उनको दे करके चपत चार,
भेजा दे एक लँगोटी भर
इस निर्धनता में कड़ी मार!

थे देख रहे इस नाटक को
कुछ सहृदय सज्जन वहीं खड़े,
उनका मन भी फट गया यदपि
थे जी के वे भी खूब कड़े।

सोचा—यह तो है अनाचार
अपने उन दीन किसानों पर,
हम फलते और फूलते हैं
बलि पर, जिनके एहसानों पर!

वे चले गए, रोते धोते
नंगे अधनंगे, ठिठुर ठिठुर,
पर, क्रूर घाटिया-सा तो होता
सबका हिरदय निठुर!

जो अश्रु गिरे थे धरती पर
वे अंगारे बनकर सुलगे,
थे खड़े देखते जो दर्शक
उनके मन में बन आग जगे !

जो खड़े हुए थे तेजस्वी
उनके कुल का सम्मान जगा,
हम खड़े रहें—हो अनाचार
उनके मन का अभिमान जगा !

तो धिक है ऐसे जीवन पर
यदि हमीं मरे, तो जिया कौन ?
इसका प्रतिकार करेंगे हम
थी हुई प्रतिज्ञा आज मौन !

प्रतिकार करेंगे हम इसका :
जो भी हो कारा फाँसी हो,
अन्याय न देखेंगे अब फिर
जीवन है ही कितना दिन दो !

वे धन्य वीर ! अन्याय देखकर
जिनका खून उबल पड़ता,
वे धन्य धीर ! बलि होने को
जिनका हो प्राण मचल पड़ता !

ऐसे ही तो दो चार सत्य-
बल वालों से धरती स्थिर है,
अन्यथा न जाने कितनी ही बेला
यह धँस, उबरी फिर है।

घाटिया ज़ुल्म करता रहता
कर का अन्याय घटाने को,
तैयार हुए कुछ मतवाले
कर का अन्याय मिटाने को!

जिन मनमोहन की वंशी से
निद्रित भारत यह जाग उठा,
उसके ही कुछ गोपों का दल
बलि होने को अनुराग उठा।

जन जन में यह चर्चा फैली
मन मन में यह कौतूहल था,
सत्याग्रह का था दिवस कौन?
पुर नगर प्रान्त में हलचल था!

रणभेरी बाज उठी घर घर
दर दर से सजा जुलूस चला,
बेतवा नदी सत्याग्रह को
देखने सभी जनगण उमड़ा।

ये तपसी तेजस्वी महान
जो देख न सकते अनाचार,
थे एक ओर दूसरी ओर
घाटिया और थे जमादार।

बेतवा किनारे लगा हुआ था
आज अनोखा ही मेला,
बुंदेलखंड था उमड़ पड़ा
आई नवजीवन की बेला!

संघर्ष आज द्वन्द्वों का था
जनता से औ प्रभुसत्ता से,
संघर्ष आज द्वन्द्वों का था
लघुता से और महत्ता से।

प्रतिबिम्ब पड़ रहा था जल में
बुंदेलखंड के धीरों का,
जिनके चंदन-चर्चित मस्तक
अर्चित सुहृदय बरवीरों का।

बेतवा स्वयं ही दर्पण बन
जैसे उनकी छवि आँक रही,
शत शत आँखों शत शत छवि भर
अंतर में गरिमा टाँक रही।

थे ब्रिटिशराज के राजदूत
शासकगण अपनी सैन्य लिए,
थे इधर बुँदेलों के सपूत
पावन थे जिनके स्वच्छ हिए।

जिन देशव्रती मतवालों की
रणभेरी बाजी थी पहले,
बेतवा करेंगे पार—आज हम
थे घाटिया सभी दहले।

बेतवा आज लहराती थी
लहरों में थी नूतन उमंग,
युग युग में आज बुँदेलों के
मुख पर चमका था रक्त-रंग।

कुछ तो जीवन इनमें जागा
कुछ तो यौवन इनमें जागा,
युग युग में सही, आज तो था
प्राणों का अलस तिमिर भागा।

आल्हा ऊदल की स्वर्गात्मा भी
तृप्त हुई होगी मन में,
जागे तो अपने कुछ जवान
जीवन तो है कुछ जन जन में।

है नहीं आज तलवार खड्ग
आत्मा पर, खूब चमकती है,
बलि होनेवालों के आगे
असि कुंठित बनी दबकती है।

बोलो भारत माता की जय
बोलो जनगणत्राता की जय!
गूँजी जय-ध्वनि यों बार बार
बढ़ चले वीरवर इधर अभय!

हथकड़ी बेड़ियाँ लिए खड़े थे
उधर लाल पगड़ीवाले,
ये इधर चले बेतवा पार
करने अपने कुछ मतवाले।

बेतवा सोचती धन्य भाग्य!
मैं इनके चरण पखार रही,
जो चले न्याय पर मिटने को
मैं जी भर उन्हें निहार रही।

लहरें आ आ बलखाती थीं
पल पल आ आ इठलाती थीं,
जाने था उनको हर्ष कौन
गुपचुप गुपचुप बतलाती थीं।

कहती थीं—है जाग्रत स्वदेश
अब जागेगा बुंदेलखंड,
आया है नवयुग का प्रभात
होगा फिर निज गौरव अखंड।

जब बिना शस्त्र ही लड़ने को
इन वीरों में जागा गौरव,
तब कौन रोक सकता उनको
आत्माहुति हो जिनका वैभव?

उन्नत ललाट नवतेज लिए
मुख पर नव श्री थी खेल रही,
जाने किस तपसी की आभा
थी सभी भीरुता झेल रही।

जैसे हो सत्य स्वयं ही आ
श्री का मंडल हो बाँध रहा,
सब निष्प्रभ थे इनके समक्ष
ऐसा था ज्योति प्रवाह बहा।

आँखों में थी करुणा बहती
अधरों पर थी मुसकान भरी,
उर में उमंग स्वर में तरंग
थी नूतन दिव्य ज्योति निखरी!

जयमाल लहरती थी
वक्षस्थल पर देवों की वर माल बनी,
ये देवमूर्ति से थे त्रिमूर्ति
जिनको पा थी वेतवा धनी!

टूटी पड़ती थी भीड़ देखने
को वीरों का महोत्साह,
व्याकुलता, उत्सुकता, उत्कंठा,
सबका था अद्भुत प्रवाह।

थी एक मधुर-सी स्पृहा अमर
तब जन गण-मन में जाग रही,
जग रही एक थी आत्मशक्ति
भीरुता सभी थी भाग रही।

सबके मन में यह भाव जगा
था नूतन एक प्रभाव जगा।
सब कुछ होकर भी कुछ न हुए
सब में था एक अभाव जगा।

यदि होते सत्याग्रही, सत्य के
लिए अभय आगे बढ़ते,
तो होता जीवन-जन्म सफल
हम भी तब सुयश शिखर चढ़ते।

हैं धन्य ! यही हम देख रहे
आँखों के आगे वीर कर्म।
अन्याय मिटाने जाते जो
यह दर्शन भी है पुण्य धर्म।

थे ब्रिटिश राज के दूत—ज़िला
के अधिपति और दरोग़ा भी,
मत इधर बढ़ो, अन्यथा बनोगे
बंदी उनको रोका भी।

क़ानून भंग कर रहे, समझते
हम, इसका है हमें ध्यान,
तुम क़ैद करो, बंदी कर लो
दो दंड कहे जो भी विधान!

है मान्य सभी, पर न्याय
यही कहता है हमसे बार बार,
कर उसे नहीं देना चहिए
जो घाट छोड़कर करे पार।'

कर लो बंदी इनको इनने है
अभी न्याय को भंग किया,
कारागृह ले जाओ उनको
इनने कारागृह स्वयं लिया।

पड़ गईं हाथ में हथकड़ियाँ
वे जीवन की मधुमय घड़ियाँ,
हम जिन्हें पहनकर खंड खंड
करते हैं लोहे की कड़ियाँ।

भारत माँ की जयकार हुई
कूलों में और कछारों में,
गाँधीजी की जय जय गूँजी
लहरों में और कगारों में।

कारागृह भेजे गए वी
वे चले हर्ष से मुसकाते,
जो बढ़ते दुःख मिटाने को
वे दुःख नहीं मन में लाते।

घर घर में ही कौतूहल था
दर दर में उनकी चर्चा थी।
स्वर स्वर में उनका नाम चढ़ा
उर उर में उनकी अर्चा थी।

बैठे हैं न्यायाधीश आज
न्यायालय में जनता उमड़ी,
न्यायालय में आये वंदीगण
हाथों में हथकड़ी पड़ी।

अधरों पर थीं मुसकान मंद
मुख पर नवतेज छलकता था,
ये अपराधी हैं नहीं, वीर हैं
रह रह भाव झलकता था।

युग परिवर्तन का युग आया
अब चल न सकेगा अनाचार,
सोई जनता है जाग उठी
युग-धर्म रहा सबको पुकार।

रह रह बढ़ती थी अधिक भीड़
रह रह जनता होती अधीर,
क्या दंड बंदियों को मिलता
था एक प्रश्न, थी एक पीर।

क्या निर्णय न्यायाधीश करें
क्या बने आज सबका विधान ?
ये दोषी हैं या नहीं यही
जिज्ञासा थी सबमें समान।

है घाट एक ही सीमा तक
हो सकता घाट असीम नहीं,
फिर सभी किनारे कर लेना
हो सकता है यह न्याय नहीं ?

गंभीर थके चिंतन में पड़
जज उठे, भीड़ भी उमड़ पड़ी,
क्या निर्णय होता ? सुनने को
जनता थी आकर द्वार खड़ी।

जज बोले—'नहीं घाट की सीमा
की है बनी जहाँ रेखा,
उसके भीतर आकर 'कर' देना
नहीं कहीं हमने देखा।

जो भी सीमा को छोड़
घाट से दूर, नदी से हैं आते,
उनपर, 'कर' नहीं लिया जा सकता
किसी न्याय के भी नाते।

ये अपराधी हैं नहीं, नहीं
अपराध यहाँ कोई बनता,
इसलिए मुक्त ये किए गए
हर्षध्वनि में डूबी जनता!

इन धीर वीर बुंदेलों ने
अपने मस्तक पर ले प्रहार,
कर दिया सदा के लिए बंद
दीनों दुखियों का अनाचार।

ये धन्य अग्रणी ! दीन-बंधु
जो उठा गरल को पीते हैं,
ये शिवशंकर, ये प्रलयंकर
जग को अमृत दे जीते हैं।

उन वंदीजन की अरुणाभा
थी विजय आरती साज रही,
गाने को स्वागत—विजय-गीत
थी सुकवि भारती साज रही !

हो गया घाटिया पीतवर्ण
हत कान्ति-दर्प अभिमान गया,
नत मस्तक वह लौटा अधीर
उसका दर्पित अरमान गया।

तीनों ही थे हो गए मुक्त
कर हुआ मुक्त, अन्याय मुक्त,
वे आये दीन किसान जहाँ
जो थे पहले ही दुःख युक्त !

जिनके कपड़े लत्ते लेकर
घाटिया बहुत ही अकड़ा था,
अन्यायी का था गर्व गलित
न्यायी का ऊपर पलड़ा था।

जनता में आया जोश कहा—
'सब चलो बेतवा पार करें,
अधिकार मिला, उपयोग करें
युग युग का यह अन्याय हरें।

जागी होगी करुणा अवश्य ही
उस दिन, जगन्नियंता की,
संकल्प उठा जिस दिन मन में
ये चले वीरवर एकाकी!

कुछ अस्त्र नहीं कुछ शस्त्र नहीं
कुछ सेना साथी साथ नहीं,
ये चले युद्ध करने केवल
था सत्य न्याय ही शक्ति यहीं!

उन रघुपति की आ गई याद
जो एक दिवस थे इसी भाँति,
चल पड़े युद्ध करने प्रबुद्ध
पैदल रथ गज की थी न पाँति।

बरसी थी नभ से सुमन राशि
उन रघुवंशी वर वीरों पर,
दशमुख बिंध पद पर लोट गए
जिनके तेजस्वी तीरों पर।

अब तो क्या था ? वह सभी भीड़
पानी में उतरी पाँव पाँव,
उस पार चली, इस पार चली
था आज न घाटिया का न नाँव।

यह था न, घाटिया हो न वहाँ
पर आज पराजित बना मूक,
देखता रहा सब जड़ बनकर
उर में उठती थी एक हूक।

वह भी था वीर बुँदेलखंड का
उसमें भी था एक हृदय,
था सोते से जागा जैसे
बोला बुँदेलवीरों की जय।

वह सत्याग्रह, वह जाग्रति-क्षण
जय ध्वनि जो गूँजी प्रहरों में।
है लिखा मौन इतिहास आज
बेतवा नदी की लहरों में।

घाटिया और वे जमादार
थे किए जिन्होंने अनाचार,
आये लज्जा से विगलित हो
नतमस्तक दृग में सजल धार।

उन नेताओं के चरणों में
झुक किया सभी ने ही प्रणाम,
बुंदेलखंड की जय गूँजी
थी हर्ष हिलोरें वे प्रकाम।

नेता बोले 'भाई मेरे
इसमें न तुम्हारा रंच दोष,
नासमझी ही का कारण है
तुम भी भरते हो राज्यकोश।

माँगो तुम क्षमा किसानों से
इनकी सेवा एहसानों से,
जिन पर था तुमने किया ज़ुल्म
इन मूक बने भगवानों से।'

घाटिया और सब जमादार
पहुँचे उनके भी पास वहाँ,
पर, वे किसान झुक गए प्रथम
यह क्या करते हैं आप यहाँ?

हम दीन हीन निर्धन मजूर
तुम मालिक हो सरकार अभी!
है खिया गया तन नहीं पीटने से
नित खाते मार सभी!

क्या हुआ आज तुम झुकते हो ?
दे रहे हमें सम्मान दान,
पर कल से यही प्रहार बदे
है इसीलिए निर्मित किसान !

भगवान ! कहाँ तुम सोते हो ?
कितने युग का पातक महान।
जुड़ता है तब निर्मित करते
सब कहते हैं जिसको किसान।

अब भी न तुम्हारी आँखों में
यदि वही सजल करुणा धारा,
पिसता ही यों रह जायेगा
तो दलित कृषक जनगण सारा !

यमुना गंगा के गले डाल
गलबाहीं बोली चलो बहें।
जग रहा हमारा राष्ट्र आज
चल सागर से संदेश कहें।

ऊँचा हिमाद्रि का मस्तक हो
सुन सुनकर जिनका अनुष्ठान,
बुंदेलखंड जाग्रत मेरा
बुंदेलखंड मेरा महान !

विश्राम

किस तरह स्वागत करूँ ? आ लाड़ले !
चाहता जी चरण तेरे चूम लूँ,
गोद ले तुझको तनिक हो लूँ सुखी,
प्यार के हिन्दोल पर चढ़ झूम लूँ।

तू अभी तो है बड़ा सुकुमार ही
हाय ! नंगे पाँव शूलों में गया,
धन्य तेरा प्रेम ! तू ने क्या कहा ?
'माँ ! अरी मैं दौड़ फूलों में गया,

लाल ! यदि तुझसे मिलें जिस देश को
क्यों सहेगा वह किसी भी क्लेश को ?
भक्त बनकर वारता है प्राण जो
मानकर भगवान ही निज देश को ?

ऐ हठीले ! आ ठहर तू अब न जा
कुछ दिनों तो गेह में विश्राम कर,
क्या कहा—विश्राम है तब तक कहाँ ?
है छिड़ा स्वातंत्र्य का जब तक समर !

अभियान-गीत

चलो आज इस जीर्ण पुरातन
भव में नव निर्माण करो,
युग युग से पिसती आई
मानवता का कल्याण करो।

बोलो कब तक सड़ा करोगे
तुम यों गंदी गलियों में!
पथ के कुत्तों से भी जीवन
अधम सँभाल पसलियों में?

दोगे शाप विधाता को लख
धनकुबेर रँगरलियों में,
किन्तु, न जानोगे अपने को
क्योंकि घिरे हो छलियों में।

कोटि कोटि शोषित पीड़ित तुम
उठो आज निज त्राण करो !
बढ़ो आज इस जीर्ण पुरातन
भव में नव निर्माण करो !

उठो किसानो ! देखो तुमने
जग का पोषण भरण किया,
किन्तु तुम्हीं भूखे सो रहते
हूक छिपाये, मूक हिया।

रात रात भर दिन दिन भर
तुमने शोणित का दान दिया,
मिट्टी तोड़ उगाया अंकुर
ग्राम मरा, पर नगर जिया !

तुम अगणित नंगे भिखमंगे
अधिक न मन म्रियमाण करो,
चलो आज इस जीर्ण पुरातन
भव में नव निर्माण करो !

व्यर्थ ज्ञान विज्ञान सभी कुछ
समझो अब है आज यहाँ,
घर में जब यों आग लगी है
घर की जाती लाज जहाँ !

राज्य तंत्र के यंत्र बने
धनपति करते हैं राज जहाँ,
यह क्या किया पाप तुमने ?
घुटते जीवन के साज यहाँ !

आग फूँक दो कंकालों में
कंगालों में प्राण भरो !
उठो आज इस जीर्ण पुरातन
भव में नव निर्माण करो !

कैसी देरी ?

धधक रही है यज्ञकुंड में
आत्माहुति की शीतल ज्वाला,
होता ! मंद न पड़े हुताशन
नव नव अभिनव आहुतियाँ ला।

होम, होम, तन मन धन जीवन
अपने नर मुण्डों की माला,
उठें लपट, झुलसे गगनांगन
फटे वज्रयुग का उजियाला।

वर की बेला चली आ रही
आज हो रही कैसी देरी,
आज बज रही है आँगन में
बापू की मोहक रणभेरी।

चल यौवन का दान लिए चल
जीवन का वरदान लिए चल,
अधरों पर मुसकान लिए चल
प्राणों में बलिदान लिए चल।

शूरों का सम्मान लिए चल
वीरों का अभिमान लिए चल,
जननी के अरमान लिए चल
प्रतिक्रिया के गान लिए चल!

प्राणों में युग युग की ज्वाला
श्वासों में युग युग की आँधी,
शोणित में युग युग का घृत ले
चल रे हव्य माँगता गाँधी।

अनुरोध

[कांग्रेस से संन्यास ग्रहण करने पर महात्माजी के प्रति यह अनुरोध लिखा गया था]

साबरमती आश्रमवाले !
ओ दांडी यात्रा वाले !
यह वर्धा में कौन मौन व्रत
ले बैठे ओ मतवाले ?

इधर आओ, बतलाओ राह ,
हो रहे कोटि कोटि गुमराह ।

हमें त्याग कर तुम बैठे
तब कहो कहाँ हम जायें ?
भूल रहे हैं, भटक रहे हैं ,
कब तक अब भरमाये ?

करो पूरी इतनी सी साध ,
आज तुम क्षमा करो अपराध !

तुम मत चूको, चूक जायँ हम
हम तो हैं नादान,
तुम मत भूलो, भूल जायँ हम
हम तो हैं अनजान।

'नहीं', तुम औ कहो मत नहीं,
कहोगे जहाँ, मिटेंगे वहीं!

सही नहीं जाती है हमसे
और अधिक नाराज़ी,
बापू बोलो कहाँ लगा दें
इन प्राणों की बाज़ी!

हमारी मिट जायेगी पीर,
चलो हाँ चलो गोमती तीर!

आज अकेला ही है अपना
सेनापति मतिमान!
धीरज दो संतप्त हृदय को
आओ तपोनिधान!

न भूलो अपना प्रण केशव!
ले चलो जहाँ विजय उत्सव!

एक बार फिर, बजे समरदुंदुभि
उमड़े उत्साह,
एक बार फिर, मुर्दों में
जागे लड़ने की चाह !

करें हम अपने को बलिदान ;
कहे जग--'जयजय हिन्दुस्तान !'

गृह-त्याग

[सुभाष बाबू के गृह-त्याग पर]

शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृह त्याग कैसा ?
देश के अनुराग ही में
आज मौन विराग कैसा ?

नग्न तन, पद नग्न, ले
परिधेय मात्र, सघन अँधेरे,
आज असमय में अकेले
चल पड़े किस ओर मेरे !

कौन है वह पथ तुम्हारा
कौन-सा अब लक्ष्य माना ?
है कहाँ से गली उसकी
कुछ नहीं संकेत जाना ।

हम कहाँ आयें किधर
उस देश का है भाग कैसा ?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृहत्याग कैसा ?

खो नहीं जाना कहीं
दीवानगी में ऐ रँगीले,
रँग न लेना वस्त्र अपने
कहीं गैरिक रंग ही ले।

बिना रँग के ही रहे तुम
चिर विरागी, ओ हठीले,
और फिर संन्यास कैसा
चाहिए ? जिसको यती ले !

आज फिर किस विजन वन में
सज रहा है त्याग कैसा ?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृहत्याग कैसा ?

थी व्यथा वह कौन-सी ?
चुपचाप की तुमने तयारी,
श्रांत है, उद्भ्रांत हम
मिलती नहीं आहट तुम्हारी।

भूल सकते हैं कभी भी
क्या तुम्हें मेरे पुजारी ?
विकल देश पुकारता है
तुम कहाँ ? मेरे भिखारी !

क्यों नहीं तुम बोलते
यह मौन से अनुराग कैसा ?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृहत्याग कैसा ?

लौट आओ ओ हठीले !
जन्मभूमि तुम्हें बुलाती,
लौट आओ लाड़ले, रूठे
तुम्हें जननी मनाती।

बंधु व्याकुल, देश व्याकुल
जाति व्याकुल है तुम्हारी,
तुम कहीं जाओ नहीं
यों क्षुब्ध हो, ओ क्रान्तिकारी !

आज घरघर गूँजता है
शोक गीत विहाग कैसा ?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृहत्याग कैसा ?

ढूँढ़ते हैं वे तुम्हें—
साम्राज्य है जिनका यहाँ पर,
हाथ में ले हथकड़ी
तुम हो यती! मेरे जहाँ पर।

प्राण आहुति चले देने
चाहते ये तन तुम्हारा,
आत्मा को बाँधती है
खूब इनकी लौह कारा।

हँस रहा है नभ उधर
यह व्यंग का है राग कैसा?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृहत्याग कैसा?

राजवंदी राष्ट्रकवि

[बाबू मैथिलीशरण गुप्त के प्रति]

बने वंदिनी के वंदन में
वंदी तुम भी आप,
निखरेगी इससे अब प्रतिभा
गरिमा शक्ति अमाप !

खादी, चर्खा, देशभक्ति औ'
स्वतंत्रता की साध,
हे भारत के पुत्र ! तुम्हारा,
यही घोर अपराध !

हे भारत-भारती, राष्ट्र-कवि
यह भी जय ही पाई,
दे न सके हम तुम्हें विदाई
देते आज बधाई !

जाओ उस कारागृह में
जो बना युगों से पूत,
जहाँ शान्ति के दूत बने थे
अमर क्रान्ति के दूत।

जहाँ महात्मा, तिलक, लाजपत
कितने अमर शहीद,
अपने पदचिह्नों से कर
आये हैं पीठ पुनीत।

जहाँ देश के आज जवाहर
लाल अनेकों बंद,
करने को निर्बंध देश को
लो,—बंधन स्वच्छंद।

सिंहासन तुम चले उलटने
ओ विद्रोही वीर!
इसीलिए, यह दंड—
तुम्हारे हाथों में ज़ंजीर।

सिखलाया तुमने भारत के
तरुणों को षड़यंत्र,
'बनो स्वतंत्र, पूर्व गौरव हो'
कितना विषधर मंत्र!

आज इसी से मिला तुम्हें यह
कड़ियों का वरदान,
देखो—खिलती रहे अधर पर
यह मंगल मुसकान।

हम भी बलि देने आयेंगे
वहीं मिलेंगे भुजभर,
अग्रज आगे गए, अनुज भी
होंगे अनुसर अनुचर।

धन्य तुम्हारा जीवन दिन है
धन्य आज ये घड़ियाँ,
जयमाला शरमाती मन में
देख हाथ हथकड़ियाँ!

हाथ पाँव बाँधे वे इतना
है उनका अधिकार,
ज़ंजीरों से क़ैद न होगी
आत्मा मुक्त उदार।

चढ़े आज आहुति पर आहुति
बलिवेदी हो पूर्ण,
विश्व कँपे, विश्वंभर काँपे
देख सत्य को चूर्ण।

कल तुम चले, आज हम आते
परसों उनकी बारी,
स्वागत का क्रम यही रहा तो
घर घर है तैयारी।

बाहर भी हम क्या हैं?
सारा भारत कारागार,
क्या कह सकते भी जी के हम
अपने मुक्त विचार?

पतन! पतन की सीमा का भी
होता है कुछ अंत,
उठने के प्रयत्न में लगते
हैं अपराध अनंत!

पूछ रहे हो किया कौन सा
था तुमने अपराध?
जीवन भर क्या किया—
जगाई कौन सलोनी साध?

फूँका था विद्रोह शंख
क्या कभी नहीं तुमने ही?
खोले थे बँधे पंख
क्या कभी नहीं तुमने ही?

सुलगाई क्या तरुणों में
तुमने न देश की आग ?
थी भारत-भारती किसलिए
क्या था प्रेम-पराग ?

फिर, बापू षड़यंत्री से
किया खूब संपर्क,
पिया प्रेम से छुप चुप तुमने
आत्म - शक्ति - मधुपर्क।

टूटें लौह श्रृंखलायें हो यों
अपनी भीड़ अपार,
ढहे खड़ी ऊँची कराल
कारागृह की दीवार !

दीनबंधु ऐंड्रूज़ के प्रति

सिंधु पार सुन पड़ी तुम्हें
कैसे जननी की पीर?
खिंच आए इस पार
अचानक भरे नयन में नीर?

पूर्व जन्म का था क्या कोई
यह आत्मिक संबंध?
हिले प्राण के तार, बँधे
तुम, सजा स्नेह अनुबंध!

भरा तुम्हारे मानस में था
कितना करुणा सिंधु?
दीनानाथ न बने कभी तुम
बने दीन के बंधु!

आँखों में भारत की छवि
स्वर में भारत का गान,
कर में भारत की सेवा
उर में भारत का ध्यान।

रोम रोम में रमा तुम्हारे
भारत का उत्थान,
रहे विदेशी कब ? तुम तो
थे भारत की संतान !

भारत की स्वतंत्रता के छेड़े
तुमने नित गान,
हो स्वतंत्र यह देश तुम्हारा
रहा यही अरमान !

भारत माता ही के चरणों में
लीं अब आँखें मूँद,
सोते तुम समाधि में सुख की
झलके यश के बूँद।

दीनबंधु, ऐंड्रूज़, बंधुवर
कैसे गायें गान ?
लिखा रहेगा नित्य गगन के
उडुगण में आख्यान !

तपोपूत तुम देवदूत हे
क्रान्ति दूत ! अवतार !
जयति देश की स्वतंत्रता के
अचल शिला आधार।

उद्बोधन

मेरे हिन्दू औ' मुसलमान !
रे अपने को पहचान जान !

हम लड़ जाते हैं आपस में
मंदिर मसजिद हैं लड़ जातीं।
हम गड़ जाते हैं धरती में
मंदिर मसजिद हैं गड़ जातीं।

मंदिर मसजिद से ऊपर हम
रे अपने को पहचान जान !

हम यवन बताते हैं तुमको
तब यवन बताते हैं पुराण,
तुम काफ़िर कहते हो हमको
तब काफ़िर कहती है कुरान।

गीता कुरान से ऊपर हम
रे अपने को पहचान जान !

हम चले मिटाने जब तुमको
बेचारी दाढ़ी कट जाती,
तुम चले मिटाने जब हमको
बेचारी चोटी कट जाती।

दाढ़ी चोटी से ऊपर हम
रे अपने को पहचान जान !

हम शत्रु समझते हैं तुमको
इतिहास शत्रु बतलाता है,
हम मित्र समझते हैं तुमको
इतिहास मित्र बतलाता है !

इतिहासों से ऊपर हैं हम
रे अपने को पहचान जान।

कार्लमार्क्स के प्रति

तुम जग जीवन के नव विहान !
तुम महाक्रान्ति के अग्नि-गान !

पूँजीपतियों के महानाश ,
दीनों दलितों के नवप्रकाश ,

साम्राज्यवाद के ध्वंस-गान
तुम जग जीवन के नवविहान !

जग में जितना भी महा त्रास ,
वह महाभूख, वह महा प्यास ,

शोषित पीड़ित के अभय-दान
तुम जग जीवन के नव विहान !

तुम करुणा की कातर पुकार,
कृषकों श्रमिकों की अश्रुधार,

तुम आश्वासन, तुम महात्राण।
तुम जग जीवन के नव विहान!

नंगों भिखमंगों की कराह,
भूखे प्यासों की दाह आह,

तुम दरिद्रता की प्रलय-तान,
तुम जग जीवन के नव विहान।

भावी जीवन के अग्रदूत,
तुम मोक्षमंत्र, तुम तपोपूत,

तुम साम्यवाद के विजय-गान।
तुम जग जीवन के नव विहान!

जग जीवन में खुल पड़ो आज
संगठित बने बिखरा समाज,

हो विश्व श्रमिक दल एक प्राण,
तुम जग जीवन के नव विहान!

लाल ध्वजा

हमारी लाल ध्वजा लहरे।
तुम्हारी लाल ध्वजा लहरे।

बम बरसे या बरसे गोली,
बढ़े लाल सेना की टोली,
मस्तक पर हो रण की रोली,

डगमग डगमग धरणी डोले,
जय जय ध्वनि घहरे।

हमारी लाल ध्वजा लहरे।
तुम्हारी लाल ध्वजा लहरे।

लाल सैन्य का लाल सिपाही,
बन कर अपने युग का राही,
दूर करेगा सब गुमराही,

लाल सितारा हो ध्रुव तारा
शत्रु देख हहरे !

हमारी लाल ध्वजा लहरे।
तुम्हारी लाल ध्वजा लहरे।

बहुत सहे हैं हमने शासन,
कमर तोड़ सिरपर सिंहासन,
आज प्रलय हो, हो परिवर्तन,

शोषित पीड़ित आज जगे हैं,
जय - निशान फहरे !

हमारी लाल ध्वजा फहरे।
तुम्हारी लाल ध्वजा फहरे।

उठे क्रान्ति का ऊँचा नारा,
दुनिया का मैदान हमारा,
कौन हमें कर सकता न्यारा ?

पृथ्वी के हम, पृथ्वी अपनी
पृथ्वीपति हहरे।

हमारी लाल ध्वजा फहरे।
तुम्हारी लाल ध्वजा फहरे।

लाल ध्वजा यह मजदूरों की,
लाल ध्वजा यह मजबूरों की,
लाल ध्वजा यह है शूरों की,

छू सकते साम्राज्य न इसको,
भीरु देख भहरे।

हमारी लाल ध्वजा फहरे।
तुम्हारी लाल ध्वजा फहरे।

गड़ें देश में लाल पताका,
रोके बढ़ बैरी का नाका,
चले लाल सेना का साका,

अन्यायों का सर्वनाश हो,
आज न्याय ठहरे!

हमारी लाल ध्वजा फहरे।
तुम्हारी लाल ध्वजा फहरे।

क्रान्ति कुमारी

मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसों के प्रलय-प्रहारों में,
मैं आती हूँ धर कोटि चरण
युग के अनंत हुंकारों में !

मैं आती हूँ ले नव भाषा,
मैं आती ले नव अभिलाषा,

नव शब्द छंद लय ताल मीड़
नव गमकों की गुंजारों में,
मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसों के प्रलय प्रहारों में।

चीरती रूढ़ियों की छाती,
बिजली बन तमसा को ढाती,

मैं आती हूँ कंधे पर चढ़
मृत्युंजय अभय-कुमारों में,
मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसों के प्रलय प्रहारों में,

जड़ गतानुगतिका हिला हिला,
अंधानुकरण पर बनी शिला,

आती हूँ कसक कराह लिए
मैं मरती हूँ बेज़ारों में,
मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसों के प्रलय प्रहारों में।

पद दलितों को मैं उसकाती,
दलितों को मैं पथ दिखलाती,

उल्का तारा शनि केतु लिए
खेला करती अंगारों में।
मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसों के प्रलय प्रहारों में।

तोड़ती नियम औ' धारायें,
फोड़ती क़िले औ' कारायें,

ज़ंजीरें बेड़ी मृत्यु दंड
फाँसी की हाहाकारों में !
मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसों के प्रलय प्रहारों में !

कवि को देती वरदान नये,
रवि को देती मैदान नये,
छवि को देती उद्यान नये,
हवि को देती बलिदान नये,

मैं ध्वंस-सृजन के चरणों से
नित अपना पंथ बनाती हूँ।
जब आती हूँ।

निर्बल के कर की ढाल बनी
निर्धन के कर करवाल बनी,
धन-दर्पित उद्धत क्रूर कुटिल
कामी—प्राणों का काल बनी,

युग युग के गौरव छत्रमुकुट में
बढ़ बढ़ आग लगाती हूँ।
जब आती हूँ !

मैं विगत अतीत पुनीत पाप की
परिभाषायें बिखराती,
नव संस्कार नव नव विचार
नव भाव कल्पना उपजाती,

निर्भय कवि की वाणी बनकर,
वीणा के तार बजाती हूँ।
जब आती हूँ।

विद्रोह भ्रान्ति विप्लव अशान्ति
उत्पात अराजकता भरती,
मैं रक्तसिंधु खौला करके
भू अंबर सभी एक करती,

फूँकती जागरण-शंख, पंख में
बँधे हुए खुलवाती हूँ!
जब आती हूँ।

भारतवर्ष

वह महिमामय अपना भारत
वह गरिमामय सुन्दर स्वदेश !
युग-युग से जिसका उन्नत शिर
है किये खड़ा हिमगिरि नगेश !

जिसके मंदिर के शंखों से
गूँजा अजेय बन ब्रह्मवाद,
भूले नश्वर तन का प्रमाद
अमरात्मा का पाया प्रसाद।

हैं अमर कीर्त्ति, हैं अमर प्राण
अमरों का अद्भुत अमिट देश।

इतिहास - पटल पर संसृति के
जो स्वर्ण - वर्ण में लिखा नाम,
वह है रघुपति की जन्मभूमि
वह है यदुपति का जन्म - धाम।

जिसके तृण-तृण में कण-कण में
वंशी बजती रहती अशेष।

युग - युग से जो पृथ्वीतल पर
है भासमान बन गगन-दीप,
कितने ही राष्ट्र-यान उबरे
पाकर प्रकाश जिसके समीप।

भवसागर के अपार तट का
जो कर्णधार कौशल - निवेश।

रण वरण किया धर चरण सुदृढ़
तब मरण बना निज स्वर्गद्वार,
पुरुषों ने रण-कंकण पहना
रमणी ने जौहर का शृंगार।

आभरण बनाया गौरव को
आवरण हटा सुख के अशेष।

कितने ही राष्ट्र उठे जग में
कितने ही राष्ट्र हुए विलीन,
जो महाकाल की छाती पर
आरूढ़ आज बन चिर-नवीन।

विश्वंभर के करुणा-बल पर
युग-युग दुर्जय देशेश देश।

प्रकाशक
अवध-पब्लिशिंग-हाउस
लखनऊ

मूल्य २॥)

मुद्रक
भार्गव-प्रिंटिंग-वर्क्स
लाटूश रोड, लखनऊ